धार उपन्यास में आदिवासी जनजीवन

डॉ. बाळासाहेब पगारे

बी. एन. एन. महाविद्यालय, भिवंडी, जि. ठाणे

समकालीन हिंदी कथासाहित्य में संजीव ने अपनी अलग पहचान बनाई है। उन्होंने अपने उपन्यासों में समाज के पिछड़े, उपेक्षित, वर्जित क्षेत्र की दर्दनाक व्यथा को वाणी प्रदान की हैं, साथ ही ग्रामीण–आँचलिक, मेहनतकश, उपेक्षित तथा शोषित वर्ग की कहानी प्रस्तुत करते हैं। उनका 'धार' उपन्यास आदिवासी जनजीवन को उजागर करनेवाला महत्वपूर्ण उपन्यास है। उपन्यास के केंद्र में बिहार का बाँसगडा गाँव है। उपन्यास में आदिवासी का जीवन संघर्ष और शोषण उभरकर सामने आता है। यह उपन्यास दो खण्ड़ों में हमारे सामने आता है। प्रथम खण्ड में पूँजिपतियों का शोषण और उसके खिलाप मैना और संथाली आदिवासियों के जीवन संघर्ष की कथा है। दूसरे खण्ड़ में को–ऑपरेटिव मायनिंग तथा जनखदान का निर्माण और उसकी राष्ट्रीयकरण की कहानी है। उपन्यास में बिहार के संथाल परगना में कोयला खदान में काम करनेवाले मजदूरों की करुण व्यथा को बड़ी सूक्ष्मता से उजागर किया गया है। आदिवासी मैंना उपन्यास की नायिका है। गाँव में तेजाब फैक्ट्री के विरोध में आंदोलन करते हुए जेल पहुँची मैना उपन्यास के आरंभ में मंगर और जेल से मिले बच्चे के साथ रिहा होती है। मैना तेजाब फैक्ट्री का विरोध करती है। मैना का पिता टेंगर और पति फोकल पूँजीपति महेंद्रबाबू के लिए काम करते हैं। उन दोनों ने वफादारी निभाते हुए उसे जेल भेज दिया था। अतः मैना परिवार को त्यागकर मंगर के साथ पडोस के गाँव में रेल के डिब्बे में रहती है। वह समाज और बिरादरी की परवाह न करते हुए मंगर के साथ रहती है। गाँव में महेंद्रबाबू और पंड़ित सीताराम शोषक वर्ग के प्रतिनिधि है, तो शोषितों में मैना, मैना की माता, मोडल आदि अन्य संथाली आदिवासी शोषण के शिकार है।

तेजाब फैक्ट्री के कारण संथाल परगने का वातावरण, पानी प्रदूषित हो चुका है। जमीन बंजर बन चुकी है और गाँव उजड़ गये हैं। जेल से रिहा होते ही मैना अविनाश शर्मा के जनमोर्चा के माध्यम से आंदोलन करती हुई तेजाब की फैक्टरी बंद करवाती है। तेजाब फैक्ट्री बंद होते ही मजदूरों के सामने भूख की समस्या निर्माण होती है। इस संकट पर मात करते हुए मजदूर रात के समय खदान में अवैध कोयला खनन करके गुजारा करते हैं। इस संदर्भ में अविनाश शर्मा कहते है, ''यह धान भी दो–तीन महीने से ज्यादा नहीं खींच पाता, चोरी से कोयला काटने–बेचेने का काम भी पर्याप्त नहीं है। फिर दूर–दूर के ठेकेदार आते हैं। इन्हें सस्ती मजदूरी पर काम के लिए ढोर–डांगरों की तरह ले जाते हैं। आश्चर्य की बात है कि धान के खेत, कोलियारियाँ और इतने कारखाने होते हुए भी इनकी जिंदगी में कोई सुरक्षा नहीं।''[1] शोषण के कारण संथालों की यह अवस्था हुई है। यहाँ की कोयला खदानें आदिवासी की मेहनत पर खड़ी है, परंतु उन्हें शोषण के अलावा कुछ नहीं मिलता है। महेंद्रबाबू का कोयला खनन का अवैध धंधा तेजी में चलता है। पुलिस के छाप में गरीब मजदूर पकडे जाते हैं। गरीब निरापराध होते हुए भी जेल में बंद मिलते है, परंतु आज भी हमारे समाज में अवैध धंदा करनेवाले खुले आम घुम रहे हैं। प्रशासन और पुलिस से साँठ–गाँठ होने से उनका कोई कुछ बिगाड नहीं पाता है। जेल में अविनाश शर्मा को छुड़वाने मैना की हर कोशिश व्यर्थ साबित होती है। इस संदर्भ में एक मजदूर बूढ़ा व्यवस्था की विसंगति पर टिप्पणी करते हुए कहता है, ''हम का बोले बेटी, पुलिस–गौरमिंट सब उन्हीं का है, उनसे लड़ पाना आसान नहीं। तुम्हारा मरद भी तो पकड़ा गया–का कर सकी तुम....?''[2] स्पष्ट है कि महेंद्रबाबू, पुलिस

और प्रशासन के आपसी मिली भगत के चलते निरपराध संथालियों को पिटा जाता है। मैंना को पिता का अंतिम संस्कार करते समय जंगल में कोयला मिलता है। मैंना गाँववाले को साथ लेकर कोयला निकाल कर बेचकर भूक की समस्या को मिटाती है। अतः वह उसे गाँववालों के उपजीविका का साधन बनाती है।

मैंना पूँजीपति व्यवस्था के विरूध्द मोर्चा खेलती है, जिससे उनके अवैध कारोबार में बाधा पहुँचती है। वे उसे अपने रास्ते से हटाने के लिए हर एक कोशिश करते हैं। आदिवासी अज्ञान के कारण अंधविश्वास में विश्वास करते है। इसका लाभ उठाकर शोषक व्यवस्था मैना की माँ को डायन घोषित किया था। अब मैना को माँ की तरह डायन साबित करना चाहती हैं। इन हरकतों के चलते कुछ समय के लिए वह मायुस जरूर होती है। उसे लगता है कि वह अभिशप्त है। जहाँ उसकी छाया पड़ती हैं, सबकुछ बंजर हो जाता है। बेटी सितवा के भागने पर वह निराश जरूर हो जाती है, परंतु हार न मानते हुए, बच्चे को पीठ पर बाँधकर सुरंग में जाकर जोश से कोयला काँटतीं है। मैना के इस रौद्र रूप को देखकर अविनाश शर्मा कहते हैं, ''न तुम्हार रुप सौंतालों से मिलता है, न रंग, न भाषा, न आचरण, तुम किसी और ही नस्ल की हो, उस नई नस्ल की जो अपनी मिट्टी, हवा–पानी से उखड़कर देश के महानगरों और औद्योगिक कसबों की तलछट बनी जीने को अभिशप्त है, जिनका न ठाव है, न ठिकाना।''[3] महेंद्रबाबू धोखे से मैना की जमीन हड़पता है। मैना अवैध कोयला खनन का विरोध करती हुई, माफिया गिरोह के खिलाफ मांस पिटीशन पर साईन अभियान चलाती है। इस खबर से सीताराम पंड़ित और महेंद्र बाबू घबरा जाते हैं। मैपा के अभियान से जागृत हुए संथाली आदिवासी रोजगार के ड़र से अंगूठा नहीं कर पाते है। माफिया गिरोह और पुलिस के बीच गोलीबारी से यह इलाका युध्दभूमि बन जाता है। सुब्बराव और सोरे जैसे आदिवासी गोली के शिकार हो जाते हैं। आतंक से सहमकर संथाली आदिवासी सोचते हैं कि, ''अब बाँसगडा मे रहने का मतलब है या तो पुलिस का शिकार बनना या माफिया का!''[4] असुरक्षितता और आतंक के खतरे से आदिवासी गाँव छोड़कर अन्य जगह विस्थापित जाते हैं। यहाँ लेखक ने आदिवासी को खदेड ने के लिए माफिया गिरोह किस प्रकार षडयंत्र करते है, इस ओर संकेत किया है।

उपन्यास का द्वितीय खण्ड़ महत्वपूर्ण है। इसमें अविनाश शर्मा जेल से रिहा होकर विस्थापन से उजड़ रहे गाँव की हालत देखकर दुखी हो जाते हैं। शर्मा और मैना शोषण का चक्रव्यूह तोड़ने और आदिवासी के विकास हेतु आदिवासियों को साथ लेकर को–ऑपरेटिव मायनिंग शुरू करेने के बारे में योजना बनाते है। योजना के अनुसार आदिवासी को साथ लेकर को–ऑपरेटिव मायनिंग के तहत जनखदान शुरु करते हैं। सरकार की अनुमति के लिए प्रस्ताव भी तैयार करते हैं। शर्मा, मैना और आदिवासी मिलकर कडी मेहनत से जनखदान को सफल बनाते हैं। जनखदान में मजदूरों की संख्या दिन–ब–दिन बढ़ती जाती हैं। यहाँ जनतांत्रिक प्रणाली अपनाते हुए सबको काम और समान वेतन मिलता है। वेतन के रुप में सबको कोयला मिलता है, और बचा हुआ कोयला सरकार के लिए जमा किया जाता है। अतः जनखदान का कोयला गाँव से शहर तक के लोगों में प्रिय हो जाता है। जनखदान का कोयला गाँव में लोग खुशी से खरीद रहे थे। जनखदान के वेतन की संकल्पना से हर कोई आचरज में पड़ता है। यहाँ कोई मालिक नहीं है। काम करनेवाला हर मजदूर मालिक है।

मजदूरों की सुविधा के लिए जनखदान के पास एक अस्पताल, एक स्टोर, तीन स्कूल और एक प्रयोगशाला बनायी जाती है। शाम को आदिवासी को शिक्षित करने हेतु प्रौढ़ शिक्षा के वर्ग भी चलाए जाते हैं। यहाँ

जनखदान के द्वारा निर्मित जन चेतना आगे चलकर राष्ट्रीय चेतना बन जाती है। मैना चकला घर में फँसी औरतों को काम देकर उन्हें गंदगी से बाहर निकालकर, आत्मनिर्भर बनने का मौका प्रदान करती है। सीताराम पंडित और पूँजीपति महेंद्रबाबू अविनाश शर्मा को धमकाते है। जनखदान के सभी मजदूर सरकारी अफसर, पुलिस, प्रशासन, पूँजीपति और माफियों से एक साथ लड़ते हुए नजर आते हैं। पूँजीपति व्यवस्था प्रशासन से मिली भगत करके सुचारू रूप से चल रही जन खदान को बंद करने का षडयंच रचते है। अतः मुआयने के लिए आये सरकारी अफसर जनखदान की अच्छी बाते न देखते हुए उसमें खोट ढूँढ़ना चाहते हैं, परंतु उन्हें खोट नहीं मिल पाती। उनके रिपोर्ट में उपलब्धियों से अधिक खामियाँ होती हैं। इस संदर्भ में प्रशासन पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी करते हुए शर्माजी कहते हैं, ''काम का ढंग, रख–रखाव, श्रमिकों का मनोबल–सारा कुछ देखकर वे निराश हुए, उन्हें खोट चाहिए थी, मगर वह मिल नहीं रही थी। सहसा उनकी नजर खदान के गिर्द चारों ओर फैले झोंपड़ों पर पड़ी।''[5] जनखदान का राष्ट्रीयकरण करने की बजाय सरकार की ओर से आये चार सांसद पूँजीपति महेंदबाबू की अवैध कोयला खदान का राष्ट्रीयकरण कर देते हैं। संजीव ने यहाँ माफिया गिरोह और राजनीतिज्ञों के षडयंत्र को उजागर किया है।

उपन्यास के अंत में सरकार द्वारा पुलिस का सहारा लेकर धोखे से जनखदान पर बुलडोजर चलाया जाता है। सामने खड़ी मैना को बेरहमी से कुचलकर जनखदान के अस्तित्व को मिटाया जाता है। व्यवस्था आदिवासियों के साथ अमानवीयता से पेश आती है। शर्मा और मैना आदिवासी को जीने के लिए विकल्प देना चाहते हैं, परंतु पूँजीपति और निर्मम व्यवस्था का षडयंत्र उन्हें सफल हेाने नहीं देता है। उपन्यास में मैना हर जगह शोषण का शिकार होती है, फिर भी हार न मानते हुए आदिवासी के हित में संघर्ष जारी रखती है। उपन्यास में मैना का संघर्षशील चरित्र उभरकर आता है। मैना के बारे में सुहास कुमार लिखते हैं, ''मैना हर लिहाज से हिंदी कथा साहित्य में धनिया और गदल के आगे की कड़ी है।''[6] उपन्यास में आदिवासियों का जीवन संघर्ष, अवैध कोयला खनन, निर्मम पूँजीपति व्यवस्था की विसंगतियाँ एवं कुटिल षडयंत्र द्वारा खदान मजदूरों का शोषण, माफियों का आतंक, मैना की आदिवासी के प्रति आस्था और उनके शोषण मुक्ति के लिए संघर्ष, भ्रष्ट पुलिस प्रशासन की काली करतूतें और राष्ट्रीयकरण के नाम पर होनेवाली राष्ट्रीय संपत्ति की लूट आदि का यथार्थ चित्रण हुआ है। लेखक ने उपन्यास में आदिवासियों का अंधविश्वास, आर्थिक अभाव, पिछड़ापन, अशिक्षा, भूख, वेश्या व्यवसाय, बाल तथा अनमेल विवाह और शोषण जैसी समस्याओं को उठाते हुए, उनके प्रति पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है।

संदर्भ –

1. धार – संजीव, पृष्ठ, 36
2. वहीं, पृष्ठ, 79
3. वहीं, पृष्ठ, 106
4. वहीं, पृष्ठ, 121
5. वहीं, पृष्ठ, 146
6. कथाकार संजीव – डॉ. गिरीश काशिद, पृष्ठ, 246
7. संजीव जनधर्मी कथाशिल्पी– डॉ गिरीश काशिद, डॉ जयश्री शिंदे